International Journal of Applied Research 2016; 2(11): 191-192

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(11): 191-192
www.allresearchjournal.com
Received: 15-09-2016
Accepted: 16-10-2016

डॉ0 नीलम रानी
सहायक प्रोफेसर–संस्कृत
राजकीय स्नात्तकोतर महाविद्यालय
महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

Correspondence
डॉ0 नीलम रानी
सहायक प्रोफेसर–संस्कृत
राजकीय स्नात्तकोतर महाविद्यालय
महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

संस्कृत नाटकों में नारी

डॉ0 नीलम रानी

प्रस्तावना

मानव जीवन पद्वति में नारी[1] विधाता की सर्वोत्तम परिकल्पना है। नारी किसी भी देश की सभ्यता एवं संस्कृति की मानदण्ड मानी जाती है। यह सम्पूर्ण मानव जीवन का आधार है। नारी जीवन की दृष्टि से भारतीय इतिहास में वैदिक काल को स्वर्णिम युग माना जा सकता है। नारी को सृष्टि का कर्त्ता माना गया है। उसे सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। मनु ने नारी को साक्षात् देवी और लक्ष्मी स्वरूप माना है। वे कहते हैं कि पिता, भ्राता, पति तथा देवर जो अपनी भलाई चाहते हों, उचित है कि वे स्त्रियों का आदर करें। जहाँ स्त्रियों का आदर होता है, वहाँ सम्पूर्ण देवता प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं, जहाँ इनका आदर नहीं, वहाँ सम्पूर्ण क्रियाएँ निष्फल होती है यथा–

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

अर्थात् जिस कुल में भगिनी, पत्नी, कन्या, पुत्रवधू और माता आदि स्त्रियाँ दुःखी रहती है, वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। जहाँ ये दुःखी नहीं होती, वह कुल सदा वृद्धि को प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोध–पत्र में नारी की स्थिति संस्कृत नाटकों में किस प्रकार से थी इसका विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है–

आचार्य भरतमुनि अपने नाट्य शास्त्र में नारी के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा है कि संसार में मानवमात्र का चरम लक्ष्य सुख है और सुख का मूलाधार नारी है। यथा–

'सर्वः प्रायेण लोकोऽयं सुखमिच्छति सर्वदा।
सुखस्य च स्त्रियों मूलं नानाषील धराष्च ताः।। (नाट्यशास्त्र 20/93)

शतपथ ब्राह्मण 5/2/1/10 में स्पष्ट है पत्नी पुरूष की आत्मा, आधा भाग है जबकि वेदव्यास ने महाभारत के आदिपर्व 74/41 में भी इसका विवेचन किया है कि भार्या पुरूष का आधा भाग यानी अर्धांगिनी है। भास के अनुसार समाज में स्त्रियों का सम्मान था। लोग अपनी पत्नी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। स्वपनवासवदत्त (6/3–4) के अनुसार नारी समान रूप से कार्यों ने राय देती थी तथा समान आसन पर बैठती थी। कालिदास के अनुसार भारत में राजाओं को प्राचीनकाल से ही अनेक पत्नी रखने का अधिकार था परन्तु साधारण प्रजा को नहीं। कालिदास पति को पत्नी पर पूरा अधिकार देते हैं। तभी तो दुष्यन्त के परित्याग करने पर भी सारद्वत कहते है कि यह तुम्हारी पत्नी है, स्वीकार करो अथवा अस्वीकार।

यथा– 'उपपन्ना हि दारेशु प्रभुत्ता सर्वतोमुखी' (अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5/26)

'मृच्छकटिक के अनुसान भारतीय समाज में नारी का सम्मान था किन्तु स्त्रियाँ सदैव पुरूषों से आंतकित रहती थी। एकांकी घूमना–फिरना उन्हें सम्भव नहीं था। पर्दे लगी गाड़ियों से ही स्त्रियाँ आती जाती थी (द्रष्टव्य मृच्छकटिकम् 6/12)। उस समय समाज में वेश्याओं का महत्व अधिक था। उस समय वसन्त सेना जैसी प्रसिद्ध वेश्यायें थी, फिर भी विवाहित नारी का समाज में विशेष महत्व था तभी तो वसन्तसेना भी चारुदत्त से विवाह कर वधू शब्द का आवरण प्राप्त करती है। यथा–

''सुदृष्टः क्रियतामेश शिरसा वन्धतां जनः।
यत्र ते दुर्लभं प्राप्तं वधूशब्दावगुण्ठनम्।। (मृच्छकटिक 4/24)

[1] टिप्पणी– संस्कृत–हिन्दी कोष (मनुस्मृति 3/56) (नृ–नर वा जातौ ङीश नि0)–स्त्री अर्थतः पुरूशो नारी या नारी सार्थतः पुमान्–मृच्छ. 3/27

कालिदास के अनुसार पतिव्रता नारी अपने पति की इच्छाओं की पूर्ति में अपनी इच्छाओं की पूर्ति मानती थी। यद्यपि कालिदास ने अपने रघुवंश महाकाव्य में पति 'रघु' के मुख से अपनी पत्नी को गृह कार्य में मन्त्रिणी और ललित कलाओं में प्रिय शिष्या कहलवाया है।

यथा– 'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रिय शिष्या ललिते कला विधौ। (रघुवंश 8/67)

सामाजिक क्षेत्र में भी नारी का महत्वपूर्ण योगदान था। गृह एवं परिवार से बाहर भी उसकी कर्मभूमि थी। नारी के बिना समाजिक उत्सवों, समारोहों और विविध प्रकार के आमोद–प्रमोद सम्भव नहीं थे। वह पति एवं परिजनों के साथ उत्सव को सफल बनाती थी।

यथा– 'जयतु–जयतु भर्ता! देवी विज्ञापयति–तपनीयगृ–शोकस्य कुसुमसहृदर्शनेन ममारम्भः सफलः क्रियतामिति।'
(मालविकाग्निमित्र, अंक 5, पृ0 342)

संस्कृत नाटकों के प्रारम्भिक काल में नारी की गरिमा अधिक होते हुए भी उसकी सामाजिक स्थिति प्रशसंनीय नहीं थी। उसका वैदिक काल में प्राप्त देवी पद लुप्त हो चुका था। वे भोग, विलास तथा उत्पीड़न के लिए ही मानों जन्म लेती थी। नारी की स्वतन्त्रता नाम मात्र थी। उन पर गुरुजन, पिता, पति का कठोर नियन्त्रण रहता था। यथा कालिदास के शब्दों में–

'आर्य! धर्म चरणेऽपि परवशोऽयं जनः।
गुरोः पुनरस्या अनुरूप वरप्रदाने संकल्पः।।

उत्तररामचरित, प्रतिमा नाटक तथा अभिषेक नाटक की सीता, महाभारत काल में नारी की सामाजिक स्थिति उत्तम नहीं थी क्योंकि द्रौपदी को उनके पिता और पति 'अर्जुन' पाँच पतियों के अधीन कर देता है, ज्येष्ठ पति उन्हें जुए में हार जाता है।
निश्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि नारी समाज का स्तम्भ है। नारी का अनादर नहीं करना चाहिए, क्योंकि नारी का पतन समाज का पतन है। संस्कृत नाटकों में विधवा की दयनीय स्थिति थी। कर्पूरमज्जरी में तांत्रिक द्वारा विधवा के साथ भोग–विलास करना राजशेखर ने उचित बतलाया है। मृच्छकाटिकम् नाटक में सती प्रथा का आदर्श प्रसंग प्राप्त होता है। प्रस्तुत नाटक में पति के सम्बन्ध में अमंगल समाचार सुनकर वस्त्र के आंचल में लिपटे अपने पुत्र को हटाती हुई उसकी चिन्ता नहीं करती और आवेश में आकर अपने पति का अमंगल सुनने से पूर्व चिता की ओर लपकती है– (मृच्छकाटिकम् अंक 10)।
संस्कृत नाटकों के अवलोकन से ज्ञात है कि तत्कालीन समाज में पर्दा प्रथा थी। पर्दा नारी की विनयशीलता और लज्जा का सूचक था। स्वप्नवासवदत्त में स्त्रियाँ पर्दा करती थी (6/16–17)। स्त्रियों के घूमने के लिए वन अलग से होता था। मृच्छकटिक के अनुसार स्त्रियाँ पर्दे लगी गाड़ियों में आती जाती थी। तात्पर्य स्पष्ट था कि परपुरुष उनके मुख का अवलोकन न करें।
वर्तमान समय में पर्दा प्रथा शनैः शनैः समाप्त हो रही है। आज भी कुछ ग्रामीण विचारधारा के व्यक्ति पर्दाप्रथा मानते हैं। यह उनकी ना समझी ही कही जाएगी क्योंकि आज नारी समाज और देश के हर क्षेत्र में पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सफलतापूर्वक काम करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिज्ञान शाकुन्तलम्
2. रघुवंश
3. संस्कृत– साहित्य का इतिहास
4. उतरराम चरित
5. मृच्छकाटिकम्